प्रकाशक
कवि श्री मदनलाल पवाँर
कोटा (राज.)

पुस्तक मिलने का
एक मात्र स्थान
मालवीय ब्रदर्स
कोटा (राजस्थान)

मुद्रक:—
जैन प्रिन्टिग प्रेस,
रामपुरा बाजार
कोटा (राज़.)

निवेदन

प्रेय पाठक,

सर्व प्रथम यह कह दूं कि—"मैं न किसी का मतवाला हूँ, मैं अपने मत का मतवाला।" स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व सदैव ही जननी जन्मभूमि की सजीव प्रतिमा हाथों में हथकड़ी और पलकों में अश्रु बिन्दु लिए मेरी आँखों के आगे झूलती रही है। कुपूत से कुपूत के हृदय में भी अपनी ममतामयी माता की यह दशा देखकर विषाद का उदधि उमड़ उठेगा। यदि नहीं, तो ऐसे प्राणी को मानव की संज्ञा देने में भी प्रत्येक सहृदय को संकोच होगा ऐसा मेरा विश्वास है। यदि पाठक वृन्द कविताओं का पाठ करते समय मुझे कवि के स्थान पर मातृ-मन्दिर का एक दीन पुजारी समझ सकें तो अधिक उत्तम होगा। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व की समस्त कविताएँ मेरी बीस वर्ष से कम आयु में लिखी गई हैं, अतः अनुभव हीनता एवं गम्भीरता का यदि कोई दोष मेरी उन कविताओं में है तो जहां तक मैं समझता हूँ क्षम्य है।

राजस्थान का इतिहास; रक्त रंजित इतिहास है अतः राजस्थानी होने के कारण मैंने अपनी कविताओं में स्वभावतः सशस्त्र क्रान्ति का ही आह्वान किया है। फल स्वरूप प्रायः अधिकांश रचनाओं में रक्त के छींटे एवं वीरोचित प्रलय हुंकारें ही आपको मिलेंगी। ग्रामवासी होने के नाते कंगाली के नग्न नृत्य अपनी आँखों देखने के मुझे अनेक अवसर मिले हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त लिखी गई रचनाओं में भी लेखनी ने वाद एवं विवाद मुक्त होकर मेरी भावनाओं का साथ दिया है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

अन्तिम निवेदन है कि सहृदय पाठक यदि कविता के ढंग से ही स्थिर चित्त होकर इनका पाठ करेंगे तो अवश्य कुछ मिलेगा अन्यथा नहीं।

आशा है आप मेरे इस प्रारम्भिक प्रयास का आदर कर भविष्य के लिये प्रेरणा प्रदान करेंगे।

आपका ही

पवाँर

कृतज्ञता प्रकाशन

—:(:॰:).—

परम श्रद्धेय भैय्या सुकवि 'श्रीहरि' एवं भैय्या प्रह्लाद पाण्डेय 'शशि' तुम्हारे ही पद चिह्नों पर चलकर आज मुझे भी अपनी भावनाएँ जन जन तक प्रेषित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

माननीय डाक्टर साहब श्री मथुरालाल जी शर्मा आप ही ने तो कवि सम्मेलनों में अनेक बार सभापति के आसन से मेरी तुकबन्दियों में निहित तथ्य को श्रोतागणों के सामने रखकर मुझे बढ़कर लिखने के लिए प्रोत्साहित किया है।

आदरणीय भैय्या नाथूलाल जैन 'वीर' मेरी इन बच्चों की सी बातों को अद्वितीय कहकर तुम्हीं ने तो मुझे स्वयं को कवि कह देने का गर्व प्रदान किया है।

गुणग्राही एवं सौजन्य की साकार प्रतिमा बना साहब श्री फूल सिंह जी बाफना आप ही ने तो समय असमय पर समय [illegible] की सहायताएं देकर मेरे अवरुद्ध जीवन को गतिमान किया है।

प्रातः स्मरणीय परम हंस दादा बाबा आपकी ही तो [illegible] अनुकम्पा से मुझे परम श्रद्धेय श्री शंभूदयाल जी सक्सेना जैसे विद्वान का स्नेह प्राप्त हो सका है और इस प्रकार परिचय में ही जिन्होंने मुझे अमित प्रेरणाओं की निधि प्रदान करते हुए मेरे इस संग्रह पर भूमिका लिखकर मुझे उपकृत किया है।

बाल्य-सखा श्री टीकमचन्द मालवीय तुमने भी तो अपने अमूल्य समय को संग्रह की प्रतिलिपियाँ करने में नष्ट कर अपने इस निरुपाय मित्र के प्रति अपने कर्तव्य का पालन किया है।

परम श्रद्धेय स्वनामधन्य जैन मुनि श्री विनय सागर जी महाराज आपने भी तो अपने संरक्षण में पुस्तक को उत्तम ढंग से छपवा कर मुझ पर अयाचित उपकार किया है।

मेरे अन्धकार मय जीवन के प्रकाश स्तम्भों! मैं आजन्म आपका आभारी रहूँगा।

पवाँर

पूर्वाभास

—:o:—

जिस नगर में हम दोनों रह रहे हैं, कवि और मैं, वहाँ हमारे अतिरिक्त यों तो लगभग एक लाख व्यक्ति और रहते हैं; किन्तु यह बात मेरी कल्पना के बाहर है कि हम दोनों परिचित न होते। कोटा के शिक्षित और अशिक्षित समाज में भी बहुत कम लोग ऐसे होंगे जो हाड़ौती के तरुण कवि श्री मदनलाल पवाँर और उनकी ओजस्विनी काव्यधारा से परिचित न हों।

साहित्यिक समारोहों में मेरा कवि पवाँर से बहुधा सम्पर्क होने के कारण मेरा परिचय कुछ अधिक आंतरिक है। प्रायः ऐसा होता था कि मैं किसी कवि सम्मेलन का अध्यक्ष होता और श्री पवाँर होते उसके लोक प्रिय कवि। अपनी कविताओं के साथ होने के कारण मैं न केवल कवि पवाँर की स्थूल देह और उनके बाह्य व्यवहार, कृत्यों आदि को ही जानता हूँ, बल्कि उनके हृदय को भी वैसे ही जानने का दावा कर सकता हूँ, जैसे अपनी दृष्टि से सुलभ किसी अन्य वस्तु को।

कवि के हृदय की कसक, पीड़ा, वेदना, असंतोष, क्षोभ, और उसके हर्ष, उल्लास, आशा, विश्वास आदि सब मैंने कविता पाठ के समय उनके मुख मण्डल पर नृत्य करते प्रत्यक्ष देखे हैं। जहाँ एक साधारण मनुष्य अपने अन्तर के गहन तलों को देख और समझ नहीं पाता है, वहाँ कवि ने अपनी मर्मान्तक अनुभूतियों को न केवल देखा और समझा ही है, बल्कि उसे भाषा देकर भारती और समाज दोनों की सेवा की है।

इन दिनों कवि पवाँर की कविताओं को और निकट से देखने का अवसर मिला। अवसर क्या सौभाग्य कहूँ। श्री पवाँर की कविताएँ पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हो रही थीं। कवि और उसके पाठकों के बीच मध्यस्थता का जो कार्य मुझे सौंपा गया है, उसके दायित्व की गरिमा को अनुभव करते हुए मैंने इस काव्य सरोवर में अवगाहन किया। मेरे इस विश्वास के कारण हैं कि श्री पवाँर की कविताएँ केवल मात्र अपने अन्तर के उन स्पंदनों की अभिव्यक्ति ही नहीं, जिन्हें हम व्यक्तिगत जीवन का अंश मानते हैं। आद्योपान्त इन कविताओं का सामाजिक महत्व है। एक क्षण के लिए हम देश के इस प्रान्त के राजनैतिक अभावों को गिनाने बैठ सकते हैं; किन्तु स्वतंत्रता के पूर्व साहित्य के क्षेत्र में कवि ने हमें स्वाधीनता के आन्दोलन में योगदान करने का अभाव अनुभव न होने दिया।

कवि की अभिलाषा ही उन संघर्ष के दिनों में भारत माँ को बन्धन मुक्त देखने की रही है। यह अभिलाषा इतनी बलवती है कि कवि कह उठा—

"शिव बनूँ पीलूँ हलाहल
....

काल के विकराल मुख को
चूम लूँ.................
सींच दूं निज रक्त से
यदि हो हरा उद्यान मेरा। पृष्ट १
क्रान्ति की आराधना में ही लगे हर श्वास मेरी।"

और कवि ने इसी अभिलाषा से प्रेरित होकर तरुणों का आह्वान करते हुए लिखा कि

"उठ तरुण तूफान सा तू
प्रलय सा छा जा समर में,
क्रान्ति की ज्वाला जगा दे
अवनि-अम्बर में उदधि में ।
मार ठोकर दासता को
तोड़ जंजीरें तड़ातड़ ।।" पृष्ठ ६

साथ ही उसके पास कवियों को संबोधित करने के लिए भी ये अंगार मय शब्द थे—

"ओ चेत चेत युग के प्रतीक
अब तो गा वह भैरवी राग,
कर श्रवण जिसे जागें मसान
कब्रों में मुर्दे जाँय जाग ।" पृष्ठ १०

स्वतन्त्रता से पूर्व कवि ने जब एक ओर किसान को संबोधन किया, तो वह भूला नहीं कि नरेश और जागीरदार भी इस यज्ञ में अपनी आहुतियाँ दे सकते हैं । उसने किसान से कहा—

"तेरे आँसू के अम्बुधि में
लय हो जायेंगे शोषक गण ।" पृष्ठ १६

नरेश से प्रश्न किया—

"क्य न हिलातीं तेरा अंतर
माता के आँसू की लड़ियाँ ?" पृष्ठ ४०

और जागीरदारों के स्वाभिमान को इन शब्दों से जागृत किया—

'कब कहाँ सिंह ने सीखा है ।
दुश्मन के तलुवे सहलाना ?" पृष्ठ ४५

यह भावुक कवि वीर है और विवेक शील भी। उसका विवेक एक वेदान्ती से भी अधिक विस्तृत जान पड़ता है। जो जीवन और मृत्यु तक में भेद नहीं करता। उसकी सूक्ष्म तलस्पर्शिनी दृष्टि पृथ्वी को भेद कर कब्रों में पड़े मुर्दों तक के अंतर को छू आई जो, यदि अपनी ओर से कुछ कह सकते तो कहते—

"कब्र के इस गर्भ में भी
शान्ति से सोने न पाते,
हैं गुलामी में मरे,
इस पाप को धोने न पाते।" पृष्ठ १८

क्या यह कहना अत्युक्ति होगी कि स्वतंत्रता के आगमन में सरस्वती के आशीर्वाद से संयुत कवि की मंत्र शक्ति का भी हाथ था! पन्द्रह अगस्त १९४७ को भारत स्वतंत्र होगया।

पन्द्रह अगस्त की पहली किरण के साथ कवि ने भोर के स्वागत में अपना गीत गाया—

"लो हटा अवनि से अंधकार
प्राची में अम्बर लाल हुआ,
....
लह लहा उठा कौमी निशान
हिम गिरि की ऊँची चोटी पर
हैं झुके करोड़ों कोट—पैन्ट
बापू की एक लंगोटी पर।" पृष्ठ ४८

किन्तु देश का विभाजन कवि सहसा स्वीकार न कर सका। भारत के टुकड़े किये जाना कवि को खटक गया। कवि की कसक इन शब्दों में फूट पड़ी—

"हां मिला अहिंसा से स्वराज्य
विस्मय की थी यह नई बात,
पर इस दुनियाँ में बन न सकी
हिन्दुस्तानी की एक जात।" पृष्ठ ५०

सन् १९४८ में ही कुछ कवियों ने स्वतंत्रता का तिरस्कार करते हुए लिखा—

"कहने को स्वाधीन हो गये, पर अब भी बन्धन ही बन्धन।"

या

"आजादी मिल गई मगर क्या जीने का अधिकार मिलगया।"

परन्तु कवि पवाँर ने स्वतन्त्रता का मूल्य भूख-प्यास से न आँक कर प्राणों से आँका है। इन शब्दों में कितना महान आश्वासन है—

"रे आज नहीं तो कल आगे
सुख साज लिये मन मुदित मस्त,
पावस घन बन, मधु बरसाता
आवेगा ही पन्द्रह अगस्त॥" पृष्ठ ५८

स्वतंत्रता के पूर्व और स्वतंत्रता के उपरान्त भी (जिन दो भागों में रचनाएँ विभक्त की गई हैं।) कवि की दृष्टि से समाज की आर्थिक दशा न छिपी हुई रही और न उपेक्षित। 'कन्ट्रोल के एक दृश्य' में 'दीवाली' में जिस विषमता के चित्र हमें पहले देखने को

मिले थे, वही चित्र हमें स्वतंत्रता के उपरान्त की रचनाओं में जैसे 'युवक' और 'शिक्षक' में मिलते हैं; किन्तु कवि ने संयम से काम लेकर अपनी और समाज की भूख-प्यास से त्रस्त न होकर राष्ट्रीय भावना को ही सर्वोपरि स्थान दिया है।

कवि की शैली सरल और सुबोध है। अनुभूति में तीव्रता और शब्दों में ओज है। वस्तुस्थिति का यथार्थ वर्णन होने से अलंकार की पग पग पर आभा व दमक है। यद्यपि भाषा में क्रान्ति की पुकार है और आन्दोलन को क्षमता; किन्तु कहीं उसका दुरुपयोग नहीं किया।

हिन्दी की अन्य पुस्तकें देखने में आती हैं, जिनमें स्वतंत्रता का आह्वान और प्रायः इन्हीं भावनाओं के चित्रण का प्रयत्न किया गया है। श्री पवाँर प्रवाह में न वहकर नैतिक साहस के साथ आगे बढे हैं। अपनी दृष्टि को व्यापक और सर्वांगीण बनाकर इन्होंने किसान और नरेश दोनों को समान ही उद्बोधन दिया है। प्रस्तुत काव्य में कवि की दृष्टि सम है। फिर जन साधारण के उपयोग की भाषा और भावना प्रयुक्त होने से सारी कृति सहज गम्य है और यही इनके काव्य की विशेषता है। मैं तो कहूँगा कि "क्रान्ति-किरण" के रूप में कवि का यह प्रयास अद्वितीय है और हिन्दी को एक विशिष्ट देन है।

आशा है पुस्तक का सर्वत्र सम्मान होगा।

शम्भूदयाल सक्सेना
एम.ए. (दर्शन, संस्कृत)
अध्यक्ष-हितकारी विद्यालय
कोटा

कोटा
दिनांक १६-६-१६५३

कवि पवाँर

विषय-सूची

—:x:—

स्वतन्त्रता के पूर्व

मेरी आकांक्षा

आज वन्धन मुक्त माता हो, यही अभिलाष मेरी।

आज अपने ही करों से
लूँ मिटा अस्तित्व अपना,
शीश के वदले कहीं यदि
पा सकूँ मैं स्वत्व अपना।

एक क्या शत जन्म लेकर
शीश हँस हँस कर चढ़ाऊँ,
निज करों से चंडिका का
रिक्त खप्पर भर वढ़ाऊँ।

शिव वनूँ पीलूँ हलाहल
पक्ष की यदि जीत देखूँ,
काल के विकराल मुख को
चूम लूँ यदि प्रीत देखूँ।

सींच दूं निज रक्त से
यदि हो हरा उद्यान मेरा,
कायरों में शक्ति का
संचार करदे गान मेरा।

झोंपड़ी के सामने प्रासाद
झुक कर भीख माँगें,
मेघ गर्जन के सदृश
हुँकार भरते सिंह जागें।

लाल जिह्वा लपलपाते
पान करने रक्त रिपु का,
बढ़ चलें निर्भय सुनाते
नाद फहराते पताका।

क्रान्ति की आराधना में ही लगे हर श्वास मेरी।
है यही अभिलाष मेरी॥

हम जगें औ विश्व के
हर रोम में विद्रोह जागे,
प्रात के तमतोम सा
मानव हृदय से मोह भागे।

जग उठें चिनगारियाँ
उन अश्रु पूरित लोचनों में,
जग उठे दावा भयंकर
शुष्क हड्डी के वनों में।

दौड़ते हों वन्य पशु
प्रतिकार माता का चुकाने,
दौड़ते कंकाल हों
पैरों तले पर्वत झुकाने ।

दौड़े विगत सन्मान
अपने हाथ में इतिहास साधे,
साथ ही अपमान भी भागे
धरा का भार लादे ।

और कर्त्ता के करों को
काट कर धड़ दूर फेंके,
उस विनाशी की चिता की
आँच में जग हाथ सेंके ।

उस चिता के तीर बैठे
भेड़िए मातम मनावें,
देश के स्वातन्त्र्य के फिर
गीत हम जग को सुनावें ।

और बुझ जाये युगों की एक जलती प्यास मेरी ।
है यही अभिलाष मेरी ॥

तरुण से

क्रान्ति वीणा पर प्रलय के
गान गाता तू चला चल,
आन पर अभिमान पर बस
बेधड़क बढ़ता चला चल—

सत्य-साहस-साधना को
तरुण चिर सहचर बनाले,
मोह निद्रा त्याग कर
विद्रोह की ज्वाला जगाले—

हो न विचलित कर्म से तू
पायगा रे जय समर में,
दुष्ट दलने को दुधारा
बाँध ले कसकर कमर में—

विश्व पथ पर सूर्य बन कर
जग मगाता तू चला चल।
तू तरुण बढ़ता चला चल॥

तू तरुण सुलझा न पाया
आज माँ की अश्रु लड़ियाँ
कर नहीं तू दूर पाया
दासता की घृणित घड़ियाँ।

विकल निर्झर के स्वरों में
है मुखर माँ की कहानी,
ओस ये मोती दृगों के
तू तरुण मत जान पानी।

सुभट भारत भूमि का है
तो दिखादे आज जग को,
क्रान्ति की हुँकृत हिलोरों
से हिला दे आज नभ को।

विज्जु बन,लोहित शिखा से
दे गला ये क्रूर कड़ियाँ।
तू तरुण सुलझा न पाया
आज माँ की अश्रु लड़ियाँ॥

उठ तरुण रवि रश्मि रंजित
हो चला आकाश है अब,
कर्म पथ पर अग्रसर हैं
मोह निद्रा त्याग कर सब।

लख तुझे बेसुध पड़ा
शोकित अरे प्यासी भवानी,
आज तुझको कोसती है
रे तरुण तेरी जवानी।

उठ तरुण तूफान सा तू
प्रलय सा छा जा समर में,
क्रान्ति की ज्वाला जगा दे
अवनि-अम्बर में उदधि में।

मार ठोकर दासता को
तोड़ जंजीरें तड़ातड़।
उठ तरुण रवि रश्मि रंजित
हो चला आकाश है अब॥

कवि से

हे युग निर्माता, युगाधार,
युग के वाहक, युग की पुकार,
युग के वैभव, युग दीप नेह,
दलितों–दीनों की निधि अपार ।

क्यों दूर आज युग से बैठे
सहलाते प्रिय के केश पाश
बहलाते मन मधु चुम्बन में
रचते कुञ्जों में रुचिर रास

पुरइन पत्रों से आच्छादित
मनहर तड़ाग के तीर बैठ,
तुम गाते हो कवि प्रणय गीत
आकर्षण मृदु स्वर में समेट ।

उड़ते अनन्त में तारों को
अपनी दुख कथा सुनाते हो,
मधुकर के मधुमय गुञ्जन में
प्रिय का सन्देशा पाते हो ।
(या दूर क्षितिज के पार कहीं
स्वप्निल संसार सजाते हो ।)

अपनी भावुकता के वश हो
कृत्रिम चित्रों को चूम रहे,
सुधि हीन हुए तुम भूले कवि
मधु की मस्ती में झूम रहे।

कवि क्या उन बहरे श्रवणों से
सुन सके कभी करुणा-क्रन्दन ?
ओ मदिर बाहुओं के बन्दी !
पहिचान सके माँ के बन्धन ?

देखा उन स्वप्निल आँखों से
कंगाली का नंगा नर्तन ?
ओ परिवर्तन के अग्रदूत !
देखा मानव में परिवर्तन।

तेरे उन्मीलित नेत्र कभी
क्या प्रासादों से टकराये ?
अबला की अस्मत लुटते लख
क्या नहीं तनिक भी शरमाये ?

ओ कलि के कवि! ओ कलाकार!
क्या देख सका बन्दी-खाना ?
माता के प्यारे पुत्रों का
क्या कभी सुना है अफ़साना ?

क्या देखा फाँसी पर लटके
हँसकर मिटते दीवानों को ?
अन्यायी भट्टी में जलते
देखा उन दीन किसानों को ?

देखा माता का प्यारा सुत
दो दो दानों को तरस रहा,
भीतर ज्वाला बाहर ज्वाला
ऊपर से आतप बरस रहा ?

यदि 'हाँ' तो तेरी आँखों में
क्यों नहीं चिताएँ सुलग उठीं ?
क्यों नहीं अनल बरसाने को
बन लोहित आँखें फड़क उठीं ?

गिर क्यों न तेरे क्रोधानल में
बन भस्म गये प्रासाद, महल ?
क्यों नहीं प्रलय गायन सुनकर
अन्यायी शासक गये दहल ?

ओ चेत चेत युग के प्रतीक !
अब तो गा वह भैरवी राग,
कर श्रवण जिसे जागें मसान,
कब्रों में मुर्दे जाँय जाग ।

शोषित जागें, शोषक जागें,
जागें हिन्दू औ मुसलमान,
जागे मन्दिर में शंख ध्वनि
मस्जिद में भी जागे अजान ।

रे, जाग जाँय सोते केहरि
औ जाग उठे जलियाँ वाला,
जागें टूटे-फूटे खँडहर
जागे झोंपड़ियों में ज्वाला ।

जागें 'सुल्ताना चाँद' और
झट जाग उठें 'लक्ष्मी बाई',
रण चण्डी का पहिनें गाना
बन जाँय शीघ्र शोणित पायी।

जागें 'प्रताप' औ 'भगतसिंह'
'आज़ाद' और 'अशफ़ाक़' वीर,
जागें 'यतीन्द्र' जागें 'शचीन्द्र'
जागें तलवारें और तीर।

जागे भारत का भाग्य दीप
कण कण में ज्वाला उठे जाग
चिर विश्व क्रान्ति की आवा...
प्याले में हाला उठे जाग

फिर बजे शीघ्र रण की भेरी
रणवीर सजें हथियार साज,
सज जाँय सहस्रों सुलताना
साजें लक्ष्मी तज लोक लाज।

रण की मस्ती में झूम चलें
लें चूम दुधारी तलवारें।
'हर हर' हरषाते बढ़ें वीर
भर विप्लव कारी हुँकारें।

लहरावें नभ चुम्बी निशान
तीनों रंगों के मिले हुए,
प्यासी तलवारें खड़क उठें
हों वीर भीर में पिले हुए।

दो धारों की टकराहट से
विद्युत की लहर निकलती हो,
खट खट खटाक शिर लड़ते हों
शोणित की धारा बहती हो।

हो क्रान्ति क्रान्ति बस अमर क्रान्ति
हो युग में भारी परिवर्तन,
उठ जाँय तख्त मिट जाँय छत्र
हो अग-जग में मधु का वर्षण।

लहलहा उठें सूखे उपवन
छाये फिर से मधुमय वसन्त,
मंगल मय वाद्यों की ध्वनि से
मुखरित हो जावें दिग् दिगन्त ।

किसान

दया-धर्म के प्रवर पुजारी,
शील, शान्ति की मूर्ति महान!
कवि का मानस मचल उठा है
गाने को तेरे गुण गान।

देख देख तव दीन दशा को
रोम रोम मेरा रोता है,
जल परिप्लावित पलक पटी पर
पीड़ा का नर्तन होता है।

अरे तपस्वी! तेरे बल पर
सकल सृष्टि का जीवन निर्भर,
ये ऊँचे प्रासाद खड़े हैं
तेरी हड्डी के ढाँचे पर।

तेरे प्राणों से अनु-प्राणित
है चेतन संसार हमारा,
हा, तेरे ही रक्त कणों से
पूरित शोषक का गृह सारा।

तू ही खून पसीना करके
उनके सारे साज सजाता,
उन्हें खिला खुद ग़म खा रहता
आँसू पीकर प्यास बुझाता।

लेकिन ग़म से भूख न मिटती
प्यास नहीं आँसू से जाती,
हे करुणामय! तेरी करुणा से
करुणा को करुणा आती।

किन्तु न तुम प्रतिकार चाहते
कैसा हृदय विशाल तुम्हारा,
तुम कह देते कष्ट हमारे
हर लेगा भगवान हमारा।

नंगी अबला, भूखे बालक
पूज चुके पत्थर का ईश्वर,
बोलो, द्रवित हुआ वह कुछ भी
पत्थर है बस केवल पत्थर।

छोड़ छोड़ वन्दन-आराधन
जग को मन मानी करने दे,
तव कोमल आशाएँ तड़पा
इनको अपने घर भरने दे।

यदि तूने निज बाना बदला
तो कंपित इन्द्रासन होगा,
हल-चल अवनीतल में होगी
अम्बर भी चल-विचलित होगा।

तेरे आँसू के अम्बुधि में
लय हो जायेंगे शोषक गण,
तेरी आँहों की ज्वाला से
धधकेगा पापों का प्रांगण।

जो तूने करवट पलटी तो
टूट गिरेंगी महल-अटारी,
तेरे भ्रू भंगों को लखकर
हिल जायेंगी गद्दी सारी।

मिट जायेंगे पापी, कामी
और अरे शासक हत्यारे,
तेरे चरणों को चूमेंगे
प्राणदान पाने को सारे।

तेरे उठ जाने पर ही तो
नवयुग का नव रवि चमकेगा,
युग युग की बन्दी माता का
ज्योतिर्मय मस्तक दमकेगा।

घर घर में दीवाली होगी
तेरे घर में देख उजेला,
तेरा अभिनन्दन करने को
आयेगी वह सुख की वेला।

तेरे खेतों की हरियाली
हरे हज़ारों दिल कर देगी,
तेरे सुख की एक श्वाँस ही
अग-जग को सुखमय कर देगी।

कन्ट्रोल का एक दृश्य

पाकर माता का अनुशासन
थैला ले बज़ार को धाया,
दाना नहीं अन्न का घर में
उर में यही विषाद समाया।

सोचा जाकर एक रुपये के
गेहूँ चने शीघ्र ले लूँगा,
माता की सेवा में रखकर
दो सौ तीस दंड पेलूँगा।

जब जाकर दुकान पर पहुँचा
देखा मुझसे बहुत खड़े हैं,
खाकी वर्दी लट्ठ हाथ में लिये
सन्तरी सात अड़े हैं।

तीन-चार ताँगे वाले भी
अपनी अपनी हाँक रहे हैं,
आने वाली माँ-बहिनों को
कामी कुत्ते ताक रहे हैं।

इतने में दुकान का ताला
आकर सेठ साव ने खोला,
'देखो वहीं पाँत में रहना'
उठ कर हेड सन्तरी बोला।

बिकने लगा अन्न हल चल सी
मची वहाँ लोगों के भीतर,
मिलने वाले सन्तरियों के
अन्न लिये जाते थे घर पर।

'यह छोटे खाँ का भाई है
इसको तीन रुपये के देना,
ये हैं साले हेड साब के
इनको चार रुपये के देना।'

मुँह बिचकाये देख रहे थे
पक्ष पात का नग्न नृत्य सब,
रक्त हीन से देख रहे थे
दानवता का क्रूर कृत्य सब।

अर्ध नग्न बूढ़ा ब्राह्मण भी
अन्न प्राप्ति हित जो आया था,
देख रहा था बूढ़ी आँखों
अनाचार का यह साया था।

धैर्य हीन हो, कपड़ा फैला
ले रुपया, आगे बढ़ आया,
जर्जर तन पर देख जनेऊ
'खाँ साहब' को गुस्सा आया।

बोले-'ओ हराम के बच्चे
बे नम्बर कैसे आता है,
अभी देखता हूँ तू कैसे
गेहूँ ले घर पर जाता है।'

इतना कह उस नर पिशाच ने
धक्का दे द्विज दीन गिराया,
वह हड्डी का ढेर ढहाया
आदर्शों का महल गिराया।

मुँह के बल गिर पड़ा ब्राह्मण
सिर से धार रुधिर की फूटी,
शिथिल हो चले अवयव सारे
लघु प्राणों की आशा छूटी।

काँप उठा कवि का कोमल तन
फूट पड़ा नयनों से निर्झर,
बोल उठा विस्फोटक वाणी में
अपना प्रलयंकर स्वर भर।

ओ ग़रीब के गर्म रक्त
झूठे टुकड़ों पर पलने वाले,
घृणित गुलामी के बाने में
अकड़ अकड़ कर चलने वाले।

शीघ्र पतन सम्भव है तेरा
चिर सीमा तेरे पापों की,
देख गगन पट छूतीं लपटें
कंकालों के अभिशापों की।

हड्डी के ढाँचों से निकली
ये ज़हरीली फुँकारें हैं,
आह कोष शोषित मानव का
ये प्रलयंकर हुँकारें हैं।

शक्ति वाहिनी जब धायेंगी
करने हित दानव-दल भक्षण,
तब त्रिशूल शिव शंकर का भी
कर न सकेगा तेरा रक्षण।

सहसा एक सिन्धु उमड़ेगा
लय हो जाओगे हत्यारो,
करुण स्वरों में चिल्लाओगे
'हमको तारो हमको तारो।'

इसीलिए कहता हूँ सैनिक
अपने पन का ध्यान धरो तुम,
पद तल से कुचले मानव का
भाई कह सन्मान करो तुम।

रे अवसर आने पर देखो
ये ही तुमको अपनायेंगे,
अकड़ रहे जिनकी हस्ती पर
वे तो अपने घर जायेंगे।

खूब सहा उनके जुल्मों को
खूब रही उनकी महमानी,
सदियों से पल रहे हमारे
तन में आग नयन में पानी।

अब तो बूँद बूँद आँसू का
अग्नि उगलती गोली होगी,
आग धधकती जो अन्तर में
प्रासादों की होली होगी।

काँप उठेंगे महलों वाले
युग का विद्रोही बाना लख,
बल खाती इतराती होगी
तृषित भवानी अरि शोणित चख।

भाग जायँगे निश्चर सारे
आर्य पुत्र सुख से विचरेंगे,
वेद मन्त्र यज्ञाहुतियों से
सकल सृष्टि में शान्ति भरेंगे।

—:❀:—

'जय हिन्द' की आवाज़ आई

आज कबरिस्तान से जय हिन्द की आवाज़ आई।

रोज़ ही की भाँति ले बस्ता
बगल में जा रहा था,
देश हित जो मर मिटे
उनके तराने गा रहा था।

कुछ क्षणों को ठहर जाता
सोचता कर्त्तव्य अपना,
क्यों न ले करवाल कर में
कर दिखा दूं सत्य सपना।

स्वप्न में नर-मुण्ड पहने
मातु की तस्वीर देखी,
अरुण आँखों में छिपी
रह रह खटकती पीर देखी।

साथ ही कर में पड़ी
दृढ़ लोह की जंजीर देखी,
पास गौ के रूप में
पृथ्वी बहाती नीर देखी।

है मुझे कुछ ध्यान उस
नरमुण्ड माला में विहँस कर,
कह रहे थे 'सिंह' प्रिय
तुम भी चढ़ा दो शीश बढ़कर।

सजल पलकें पोंछ मैं
ज्यों ही बढ़ा पद चूमने को,
झट मुझे झकझोर कर
'हरि' ने कहा चल घूमने को।

स्वप्न यह क्षण भर मुझे
सुख नींद में सोने न देता,
मुस्कराना दूर है
मन भर मुझे रोने न देता।

सजल पलकें देखकर
धिक्कारता प्रति रोम मेरा,
'अश्क बन बहता रहा तो
दूर है तेरा सवेरा।'

था खड़ा चिन्तित कि सहसा
कब्र फटती दी दिखाई,
एक नर कंकाल की सूरत उठी
चल पास आई ।

देखता क्या हूँ कि उस
कंकाल के भी लोचनों से,
बह रहे थे अश्रु बन
अविरल छलकते भाव उसके।

भर भराये कण्ठ से
कहने लगा अपनी कहानी,
अय युवक ! दो ही दिनों में
बीत जाती है जवानी ।

जान कर उद्विग्नता तेरी,
शिरायें तन उठी हैं,
राष्ट्र रक्षा के निमित
दफ़नी चिताएँ जल उठी हैं ।

कब्र के इस गर्भ में भी
शान्ति से सोने न पाते,
हैं गुलामी में मरे
इस पाप को धोने न पाते।

तड़फड़ातीं हैं रुहें
आजाद भारत देख पायें,
मूक कण्ठों से सभी
'जय हिन्द' के नारे लगायें।

रंज है सारे बिरादर
भूल बैठे रास्ता हैं,
फ़कत उनको तो 'जिन्हा'
'पाकेस्तां' से वास्ता है।

हम रहे मिलकर रहे
पर ये अलग जाकर रहेंगे,
हिन्द मादर के जिगर के
ओह! दो टुकड़े करेंगे।

हैं रुहानी बददुआयें
कारगर होने न देंगी,
न वतन के दुश्मनों को
नींद भर सोने न देंगी।

भर जुबाँ से आह
पाकेस्तान की देते दुहाई,
देख कबरेस्तान से
'जय हिन्द' की आवाज़ आई।

आज कबरेस्तान से 'जयहिन्द' की आवाज़ आई।

दीवाली

भारत के कोने कोने में
यह कैसी अँधियारी छाई ?
दीवानों यह शोर मचा क्यों
उजियाली दीवाली आई ?

इन लघु दीपों के प्रकाश में
तुम उन देहातों को देखो,
अन्यायी भट्टी में जलते
उन दुखिया-दीनों को देखो।

देखो, उनके दलित हृदय में
आँसू का सागर लहराता,
सकल सृष्टि का दुख दारुण आ
धीरज बन जिसमें बस जाता।

इस दुनियाँ में दुख सहने ही को
विधि ने जिनको उपजाया,
अविरल तप से तप्त हड्डियों तक
सीमित है जिनकी काया।

जिनके जलते से अन्तर में
इच्छाएँ उठ उठ मिट जातीं,
निराहार ही तड़प तड़प कर
कितनी ही रातें कट जातीं।

उनके मुरझाये मानस में
अरे कभी हरियाली छाई,
उनसे भी तो जाकर पूछो,
उनकी कभी दिवाली आई।

× × ×

इधर देख लो इस शोषक ने
कैसा अपना साज सजाया,
इन्द्रदेव का काम भवन भी
जिसकी समता में शरमाया।

बिछे हुए क़ालीन-ग़लीचे
सजे हुए मदिरा के प्याले,
नृत्य हो रहा वेश्याओं का
पी पी झूम रहे मतवाले।

इन विलास के कीड़ों की तो
आठों पहर दिवाली रहती,
वार वार भरती जाने पर भी तो
प्याली खाली रहती ।

इन्हें नहीं दुनियाँ की चिन्ता
हो गुलाम यदि देश इन्हें क्या,
कह दो इन कामी कुत्तों से
जीने का अधिकार तुम्हें क्या।

थूंको इनके कुत्सित मुख पर
लानत है इनके जीवन को,
आज मिटा दो इनकी हस्ती
जिन्दे ही दफ़नादो इनको :

आजादी के पावन पथ में
ये ही रोड़े बने हुए हैं,
चूम रहे रिपु के चरणों को
महा स्वार्थ में सने हुए हैं।

ज्ञात नहीं इन अज्ञानों को
दीपक ही घर सुलगायेगा,
केवल कुछ ही दिन के भीतर
रक्षक भक्षक बन जायेगा।

पश्चाताप करेंगे पापी
रोयेंगे अपने कर्मों को,
अब भी अवसर है यदि चेतें
समझें इन गहरे मर्मों को।

हृदय लगा लें इन दीनों को
कहकर अपने प्यारे भाई,
जिनके मुरझाये मानस में
नहीं कभी हरियाली छाई।

× × ×

माँ के कर में पड़ी हथकड़ी
लख कर आँखें भर भर आतीं,
रोकें अरे नहीं रुकतीं फिर
आखिर निर्झर सी झर जातीं।

उथल पुथल अन्तर में होती
रोम रोम रह रह रो उठता,
कैसे माँ के बन्धन काटें
भावों का मेला सा लगता।

क्या आँखों से देख सकेंगे
हैं स्वतन्त्र अब अपनी माता,
क्या प्राची में उदय हो सकेगा
आशा का सूर्य विधाता।

फिर से पुण्य भूमि यह अपनी
क्या दुष्टों से खाली होगी?
भाग्यहीन बूढ़े भारत की भी
क्या कभी दिवाली होगी?

राजस्थान

वीर प्रसविनी भूमि जहाँ की
भारत माता का सन्मान,
भू लुंठित हो पड़ा रो रहा
वही हमारा राजस्थान ।

यही वही कानन है जिसमें
सिंह सदा विचरण करते थे,
यही वही उपवन है जिसमें
जग विख्यात सुमन खिलते थे ।

यही वही समराङ्गण जिसमें
रुण्ड-मुण्ड उठ उठ लड़ते थे,
यही वही आंगन है जिसमें
सब स्वतन्त्रता से बढ़ते थे ।

आज मरुस्थल का कण कण भी
उन वीरों का वैभव गाता,
आज किलों का पत्थर पत्थर
दीवानों की याद दिलाता ।

शीश उठाये गिरि अरावली
कहता बीती हुई कहानी,
"कभी यहाँ शोणित बहता था
आज जहाँ बहता है पानी ।

मैंने देखा अपनी आँखों
'पद्मा' 'कर्णवती' का जौहर,
सादर अर्पित करते देखा
'श्री भामाशा' को अपना घर ।

यहीं कभी 'बाबर' के सिर पर
'साँगा' की तलवार तनी थी,
आजादी के दीवानों की
मैंने प्रलय पुकार सुनी थी ।

दिव्य शक्ति संचारित करता
तब शीतल समीर बहता था,
यहीं आन पर मिटने वाला
प्रण पालक 'हमीर' रहता था ।"

वही आज वैभव विहीन हो
मूक व्यथा के भार ढो रहा,
आकुल अरमानों के जल में
वह बीता इतिहास धो रहा।

आज करुण स्वर में पुकारता—
'हे सैनिक ! संग्राम कहाँ हो ?
आज़ादी के अमर उपासक
हे राणा ! परताप कहाँ हो ?'

हिल उठती समाधि राणा की
अब भी करुण पुकार श्रवण कर,
किन्तु न जूं तक रेंग सकी है
आज अरे तरुणों के तन पर।

भूल गये आदर्श पुरातन
सिंह बने शृग्गाल जी रहे,
ज्ञात नहीं पानी में परिणत
माँ के आकुल अश्रु पी रहे।

लो अँगड़ाई सोते सिंहो
अवसर तुम्हें पुकार रहा है,
तरुणों का ताजा शोणित ही
माता का आधार रहा है।

इस नैराश्य निशा में वीरो
बलिदानों के दीप जला दो,
सनी हुई बेबस शोणित से
प्रासादों की नींव हिला दो।

प्रलय नाद के नक्कारों पर
लहराये फिर से यह गान,
"हम वीरों की वीर भूमि है
यही हमारा राजस्थान।"

नरेश

अरे न्याय की मूर्ति, सृष्टि में
सर्व श्रेष्ठ, नर ईश महान,
देख तुझे निज पथ से विचलित
रो उठते हैं कवि के प्राण।

वह अपनी उदास आँखों से
देख रहा है राज-महल को,
सिंहों के आसन पर होती
वेश्याओं की चहल-पहल को।

देख रहा सोने-चाँदी के
सुरा पात्र में पेय तुम्हारा,
रे! विलास की पतित पूर्ति ही
बना हुआ है ध्येय तुम्हारा।

कहां गया वह बीता वैभव?
कहाँ गई तेरी रजपूती?
ओह, आज सिंहों के घर में
बजती शृगालों की तूती।

देख देख अब तो मतवाले
पड़ा हुआ माँ के घर बन्धन,
क्या न सुनाई देता तुझको
यह दुखियों का करुणा क्रन्दन ?

क्या न हिलातीं तेरा अन्तर
माता के आँसू की लड़ियाँ ?
क्या न तुझे पीड़ा पहुँचातीं
महा कठिन कारा की कड़ियाँ ?

क्यों न दीन की सर्द आह से
हिल उठता तेरा सिंहासन ?
क्यों न देश की दीन दशा लख
भर भर आते तेरे लोचन ?

क्यों तेरे अन्तर तम में कुछ
मातृभूमि हित प्यार नहीं है ?
आँखों में अँगार नहीं हैं
हाथों में तलवार नहीं है।

कहता—"मेरे हाथ बँधे हैं
छूट गईं नंगी तलवारें,
मदिरा की प्याली में अब तो
डूब गईं मेरी ललकारें।"

तन से दुर्बल मन से कामी
यह नरेश का रूप नहीं रे,
आज तुझे धिक्कार रहा जग
तू कायर है भूप नहीं रे।

ओ नर ईश कहाने वाले
तू कायर बन क्यों जीता है,
चेत चेत ओ पीने वाले!
तेरा जीवन घट रीता है।

देख देख राणा प्रताप भी
नृप, तुझको ललकार रहा है,
जो मरते दम तक भी अपनी
चमकाता तलवार रहा है।

इस नवयुग के पुण्य प्रात में
जागो अपनी शय्या छोड़ो,
सुरा-सुन्दरी के सपने तज
सुरा पात्र दे ठोकर तोड़ो।

आज सजालो रण का बाना
सुनलो रण भेरी बजती है,
प्रतीकार युग युग का करने
अब स्वतन्त्र सेना सजती है।

तेरा रौद्र रूप लख राजन्!
सुरपति भी शरमा जायेंगे,
तेरे भ्रू भंगों को लखकर
सप्त सिन्धु गरमा जायेंगे।

तेरी हुँकारों को सुनकर
काँप उठेगा रे निश्चर दल,
तेरी ललकारों को सुनकर
अरे मचेगी भारी हल-चल।

आजादी की मस्ती में जब
तेरी टोली झूम चलेगी,
तब प्रेमातुर हो जननी भी
तेरा मस्तक चूम चलेगी।

जागीरदार

सत्ता के टुकड़ों के गुलाम
माँ की छाती पर व्यर्थ भार,
ये तावदार मूँछों वाले
हैं कहलाते जागीरदार।

शासन के प्रति हो वफ़ादार
तानी पुरखों ने तलवारें,
मतलब के अन्धे मूर्ख बने
बहवादीं शोणित की धारें।

दानी शासक का हुक्म हुआ—
"जाओ दस गाँव इनाम दिये,
सन्तुष्ट नहीं हो यदि अब भी
'सर' 'महाराजा' के नाम दिये।"

होकर प्रसन्न घर को लौटे
जुड़ गये शान में चाँद चार,
कहलाये कल के कान्ह सिंह
"श्री महाराजा", "जागीरदार"।

कच्चे घर-बार बने बाड़े
महलों की नीवें उठने लगीं,
हाला—प्याला—सुरबाला पर
मनमानी दौलत लुटने लगी।

उन दीन किसानों की पूँजी
पानी बन बन कर बहने लगी,
झोंपड़ियों में करुणा क्रन्दन
महलों में रुनझुन रहने लगी।

अब भी तो यही ठाठ इनके
पीढ़ी दर पीढ़ी चलते हैं,
जग जठरानल में जलता है
पर ये प्यालों में पलते हैं।

पापी सत्ता के प्राण बने
निज वैभव पर इतराते हैं,
देखो तो पुश्तैनी गुलाम
मूछों पर ताव लगाते हैं।

रे बीत गया सारा वैभव
अब कहाँ मूँछ की शान रही,
अब कहो कहाँ रजपूती की
वह आन रही वह बान रही।

कब कहो सिंह ने सीखा है
दुश्मन के तलुवे सहलाना,
रजपूत नहीं सह सकता है
औरों का चाकर कहलाना।

लख वृद्धा माँ के सजल नयन
तुझको सन्देश सुनाते हैं,
स्वजनों की आहों के अम्बर
जलती ज्वाला बरसाते हैं।

शंकित आँखों से देख रहीं
कोने में लटकी तलवारें,
हा शोक! मोर्चा खीन हुई
प्रलयंकर खाँडे की धारें।

उठ महावीर, तू काल रूप
ओ आज़ादी के अग्रदूत !
हुँकार उठा 'बम महादेव'
रण राँचे साँचे राजपूत।

आ निकल गुलाबी गलियों से
अङ्गो पर केशरिया सजले,
अवनी-अम्बर हों धुआँ धार
शोणित की गंगा बह निकले।

तेरे ही प्रलयंकर प्रहार
नैराश्य निशा का बनें अन्त,
तेरे ही इंगित पर जवान
बीते पतझड़ छाये बसन्त।

स्वतन्त्रता के उपरान्त

हम जियें और को जीवन दे

हम पियें और को पय घट दे.

हम एक बार ही मुसकायें

उन अधरों को मुसकाहट दे।

जो अब तक पूँजीपतियों की

उन अनगिन निर्दयताओं का,

बनकर शिकार थे बन्द हुए

इस विधि की निर्ममताओं का।

पवाँर

पन्द्रह अगस्त (सन् ४७)

लो हटा अवनि से अन्धकार
प्राची में अम्बर लाल हुआ,
सदियों से पीड़ित, अपमानित
भारत का ऊँचा भाल हुआ।

लहलहा उठा कौमी निशान
हिमगिरि की ऊँची चोटी पर,
हैं झुके करोडों कोट-पेन्ट
बापू की एक लंगोटी पर।

रण चंडी की बुझ प्यास गई
कर नवयुवकों का रक्त पान,
व्यथितों की करुण कराहों से
थर थर थर्राया आसमान।

आजादी के दीवानों पर
युग भर घातक गोलियाँ चलीं,
लाखों घर बन शमशान गये
लाखों घर में होलियाँ जलीं।

मदमाते वीर जवानों ने
हँसते हँसते सह लिये वार,
वह उठी जननि के नयनों से
ममता की पावन परम धार।

आँधी, पानी, तूफान उठे
हँसते उपवन बरबाद हुए,
तब कहीं दीन भारत-वासी
कहने भर को आजाद हुए।

पर हाय! फूट पापिन तूने
अपनी मनमानी कर डाली,
जिसका न कभी विश्वास हुआ
ऐसी नादानी कर डाली।

हिन्दू को हिन्दुस्तान मिला
जिन्ना का पाकिस्तान हुआ,
यों अपने ही हाथों अपनी
बरबादी का सामान हुआ।

माना दोनों में मेल न था
ले अपने अपने भाग लिये,
शुभ होता करता राज्य एक
दुसरा रहता अनुराग लिए।

दुनियाँ में शाह कहाने की
यदि जिन्ना की इच्छा ही थी,
तो नेहरू जी क्यों दी न उन्हें
पूरे भारत की भिक्षा थी?

दिखला लेने देते उनको
दो क्षण जुगनू का सा प्रकाश,
हो भी जाने देते पूरी
उनके अन्तर की एक आश।

हाँ, मिला अहिंसा से स्वराज्य
विस्मय की थी यह नई बात,
हर इस दुनियाँ में वन न सकी
हिन्दुस्तानी की एक जात।

क्या होगा बात बढ़ाने से
कह दें भारत आजाद हुआ,
नाशाद हुए भारतवासी का
दिल यों फिर से शाद हुआ।

अब रेल-तार-पलटन अपने
अपने ही वायूयान हुए,
नर-किन्नर अमित उछाह भरे
गा आजादी के गान रहे।

झोंपड़ि से लेकर महलों तक
आजाद तिरंगा लहराया,
आह्लाद भरा यों विजय नाद
अवनी-अम्बर में घहराया।

रजनी देवी माँ वन्दन को
भर तारों की थाली लाई,
कण कण में भरती दिव्य आश
भारत में दीवाली आई।

हो गया सरित सुरभित समीर
जन जन पर छाया मधुर हास,
हे नभ के दीप! तुम्हीं कहदो
है छिपा कहाँ प्यारा सुभाष ?

दीनों के अन्तर का सनेह
माता की आँखों का प्रकाश,
इतना निष्ठुर बन छिपा हुआ
अब भी है क्यों प्यारा सुभाष ?

हैं कहाँ भगत, प्रियवर प्रताप,
आजाद कहाँ, अशफ़ाक कहाँ ?
उन वीर शहीदों की निशेष
है वह पावन-तर खाक कहाँ ?

लूँ आज चढ़ा निज मस्तक पर
झुक झुक कर करलूँ अभिनन्दन,
जिनके शोणित के सिंचन से
प्लावित हो हरियाया उपवन।

हे उड़ते विहग! जरा उनसे
कह देना दूर विषाद हुआ,
माता के बन्धन टूट गये
भारत फिर से आज़ाद हुआ।

वे आवें फिर से भारत में
भारत का पुनरुत्थान करें,
लें बिगड़े काम सँभाल शीघ्र
आती मुश्किल आसान करें।

पन्द्रह अगस्त (सन् ४८)

टिम टिमा रहे तारे नभ में
पर सरस सुधाकर हुआ अस्त,
आजाद देश का पुण्य पर्व
बनकर आया पन्द्रह अगस्त।

उन वीर शहीदों की पावन
प्रेरक फरियाद लिये आया,
आँखों में आँसू का सागर
बापू की याद लिये आया।

लेकर आया नूतन सन्देश
उपवन अपना आबाद रहे,
हम चाहे घुट घुट मर जायें
पर हिन्द सदा आजाद रहे।

दिन में दो बार नहीं तो क्या
हम एक बार ही खा लेंगे,
हों दूर मधुर षट्रस पदार्थ
खा ज्वार आत्म सुख पा लेंगे।

गर गली ज्वार भी मिले नहीं
हमको इसकी परवाह नहीं,
हम किसी तरह भी जी लेंगे
अब तो सुखों की चाह नहीं।

भूला बीता इतिहास मनुज
भूला भारत माँ का विलाप,
दीवानों की पीड़ा भूला
और भूल गया राणा प्रताप।

वह था प्रताप जिसने हँस हँस
वन पीड़ा के दुख झेले थे,
वीरों के उष्ण अरुण जल से
वह खेल फाग के खेले थे।

वह मुक्त सिंह था प्राणों से
बढ़कर उसको थी आजादी,
होकर गुलाम आबाद रहें
इससे तो सुखकर बरबादी।

माना अब भी लाखों प्राणी
घर बार बिना रोते फिरते,
दुर्बल कन्धों पर स्वजनों का
भारी बोझा ढोते फिरते।

औ कवि लिख देता कविता में
विह्वल हो करुण कहानी को,
चित्रित कर देता है चित्रकार
नयनों से बहते पानी को।

कह उठता कैसे कलाकार
'लानत ऐसी आज़ादी को,
जो लेकर आई भारत में है
घर घर की बरबादी को।'

वह भूल गया सन् सत्तावन
भूला अनगिन बलिदानों को,
सन् बयालीस के महा काण्ड में
भेंट चढ़े दीवानों को।

उसको उनसे मतलब ही क्या
वह तो सह सकता भूख नहीं,
'है बिना खाद औ पानी के
जीवित रह सकता रूँख नहीं।'

अंकित करने से कलाकार
क्या होगा विगत व्यथाओं को,
कहदे तू ही क्या होने का
कहने से करुण कथाओं को।

टूटा दिल टूक टूक होगा
वेदना-ग्रस्त होंगे तन-मन,
उन धँसी हुई आँखों में फिर
छल छला उठेंगे आँसू कण।

इससे तो शुभ है तू उनके
उर में भर दे उत्साह अमर,
विश्वास दिलाता चल उनको
आगे बढ़ जावें बाँध कमर।

संयम युत कर्म वीर बनकर
वे नवयुग का निर्माण करें,
आह्लादित नर क्या किन्नर भी
नव भारत का गुण-गान करें।

रे आज नहीं तो कल आगे
सुख साज लिए मन मुदित मस्त,
पावस घन बन मधु बरसाता
आवेगा ही पन्द्रह अगस्त ।

संघर्षों में जीवन पलता
सूखे हरिया उठते उपवन,
है नियति नियम जब परिवर्तन
जगती का क्रम उत्थान-पतन।

शाबाश शेर! आगई चमक
तेरी मुरझाई आँखों में,
उड़ मंजिल पूरी करने की
भर शक्ति गई इन पाँखों में।

आशा का दीपक लिये बढ़ो
संघर्षों को कर प्यार चलो,
तुम हो अजेय जय पाने को
भारत माँ के सुकुमार चलो।

आतुर है स्वागत करने को
जग बाँधे अपने हाथ खड़ा,
सोने की चिड़िया बने देश
कहता गत वैभव पड़ा पड़ा।

तुम तूफानों से लड़ो चलो
रणवीरो अपनी गति खोलो,
दिग्पाल काँप लड़ खड़ा उठें
'आज़ाद हिन्द की जय' बोलो।

महाराणा से

इतिहास राजपूताने का
या आँसू का सागर है यह,
या जिसमें सागर समा गये
वह छोटी सी गागर है यह।

उत्सुक हाथों से उठा लिया
चूमा पलकें हो गई सजल,
किसके पावन पद धोने को
आँसू की धार वही अविरल?

स्मृति पट पर खिंच गया चित्र
निर्जन में बैठे हैं प्रताप,
अरु पास वहीं 'माँ भूखा हूँ'
कहकर बच्चा करता विलाप।

इतने ही में सूखा टुकड़ा
बच्चे ने पाया तोष हुआ,
वरदान मिला, खिल उठे नयन
रोता बच्चा खामोश हुआ।

यह क्या–देखो तो वन बिलाव
झपटा, टुकड़ा ले भाग चला,
रोया बच्चा राणा का भी
धीरज राणा को त्याग चला।

फिर पट परिवर्तन हुआ
अग्नि की लपटें नभ को छूती हैं,
हैं खड़ी हुई केशरिया सज
कितनी ही वीर प्रसूती हैं।

"हर हर हर महादेव" कह कर
लो कूद पड़ीं ज्वालाओं में,
वे कोमल तन ढक गये अरे
निर्दयी ज्वाल मालाओं में।

बस लोह लेखनी मचल उठी
फिर राग भैरवी गाने को,
भावों का ज्वाला मुखी फटा
फिर से नव जीवन लाने को।

मैं भी तो राजस्थानी हूँ
मुझ में भी तो है गर्म रक्त,
मेरे उर में भी ज्वाला है
मैं हूँ शक्ती का परम भक्त।

फिर क्यों कायर बन आज अरे
ये जीवन के क्षण बिता रहा,
अपने अनगिन अरमानों की
चुन अपने हाथों चिता रहा।

मरुधर के कण कण रोते हैं
दुर्गों के पत्थर रोते हैं,
रोता है कवि, कविता रोती
पर भाग्य विधाता सोते हैं।

जागो राणा! तुम ही जागो
तुम तो प्रताप के वंशज हो,
हो शक्ति सिन्धु, तुम दीनबन्धु
तुम वीर भटों में दिग्गज हो।

क्या देख नहीं पाते राणा
जननी की आँखों का पानी,
क्या तुमसे छिपी हुई अब तक
अपनों ने की जो नादानी।

मेरी आँखो देखो राणा
जननी के खंडित हुए अंग।
भारत को स्वर्ग बनाने के
सब स्वप्न हमारे हुए भंग।

'महाराज प्रमुख' कहलाने ही में
भूल गये क्या अपना पन ?
हो विता रहे भेड़ों जैसा
राणा अमूल्य अपना जीवन।

वह राजपूत क्या जिसने बढ़कर
नहीं काल को ललकारा,
जिसकी भृकुटी में बल लख कर
थर-थरा उठे त्रिभुवन सारा।

जो आगे बढ़ कर चंडी के
खाली खप्पर को भर न सके,
जननी की करुण कराहें सुन
सामोद मोह तज मर न सके।

तो फिर उससे तो अच्छे ये
चाँदी के टुकड़ों के गुलाम,
'मल' 'लाल' लगाकर साथ लिए
चलते हैं अपना वणिक नाम।

यदि सिन्धु छोड़ दे मर्यादा
हिमगिरि दे अपनी जगह छोड़,
तो फिर सम्भव है जुगनू भी
कर ले निशिपति से सहज होड़।

कवि सिर से हाथ लगा सोचे
कैसे नवयुग निर्माण करूँ,
मानव हैं चिकने घड़े बने
कैसे इनमें नव प्राण भरूँ।

तो तुम्हीं कहो राणा कैसे
भारत में नवयुग आयेगा ?
वेद मन्त्रों का साम नाद
कैसे अम्बर में छायेगा ?

जब तक गंगा अरु सिन्धु नदी
की धार बहे गौ रक्त लिए,
तब तक कैसे भारत वासी
निज को माता का भक्त कहे ?

जब तक माता के अर्ध अंग संग
दानव क्रीड़ा करते हैं,
तब तक कैसे हम माँ के सुत
कहलाने का दम भरते हैं ?

राणा ! तुम पर ही अटकी हैं
कवि की आँखें होकर निराश,
बस तुम पर ही न्यौछावर हैं
आकुल अन्तर के सर्द श्वास।

जो गर्म रक्त राणा प्रताप के
पावन तन में बहता था,
जननी की दीन दशा लखकर
जो प्रतिपल उन्मन रहता था।

यदि उसी रक्त की कुछ बूँदें
अब भी रक्षित हों उस तन में,
तो तड़प बढ़ो मेरे राणा
ज्यों कड़क उठे चपला घन में।

अरिदल के ऊपर फूट पड़ो
बन काल रूप रवि से प्रचन्ड,
बस गूँज उठे नारा दिशि दिशि
'भारत अखण्ड' 'भारत अखण्ड'।

तेरे उठते उठ जावेंगे
शमशीर तोल कर कोटि हाथ,
तेरे बढ़ते बढ़ जावेंगे
तज मोह प्राण का कोटि साथ।

ले राष्ट्र ध्वजा कर में अपने
राणा तू ही सेनानी बन,
भारत अखण्ड के पृष्ठों पर
बस तू ही अमर कहानी बन ।

यह आर्य भूमि भारत अपनी,
इस पर अपना अधिकार अमर,
जब पाप बढ़ा तो होते ही
आये हैं इस पर महा समर ।

इस देव भूमि पर कोई भी
अनुचित अधिकार जताये क्यों ?
अधिकार हमारा छीन हमें
कायर निष्प्राण बताये क्यों ?

अधिकार गवाँ कर चुप बैठें
सचमुच यह तो कायर पन है,
खाने पीने के लिए जियें
यह भी क्या कोई जीवन है ?

होने दो महा प्रलय हो तो
शोणित की नदियाँ बहने दो,
यह 'ओ३म् शान्ति' कायर, कपटी
ठेकेदारों को कहने दो।

रे शान्ति कहाँ जब तक माँ की
आँखों से सुरसरि बहती हो,
दुष्टों के अत्याचारों से
यह धर्म धरित्री दहती हो।

रे अंग्रेजों से भी बढ़कर
ये अपने घातक सिद्ध हुए।
अपने ही टुकड़े खा कर ये
हमसे ही आज विरुद्ध हुए।

राणा श्वासों का पता नहीं
जल्दी यह पूरा कार्य करो,
यदि भारत में रहना चाहें
कर शुद्धि इन्हें भी आर्य करो।

वरना खैबर के दर्रे का
वह साफ़ रास्ता दिखलादो,
हैं वीर शेष भारत भू पर
इन नर पशुओं को वतला दो।

चिर सीमा है दानवता की
हो चुकी वहुत अव मन मानी,
रे वीत गई कितनी सदियाँ
हो चुकी वहुत अव मनमानी।

वस टूट पड़ो राणा अव तो
नभ से टूटे ज्यों वज्र दण्ड,
अणु अणु कण कण भी बोल उठें
'भारत अखण्ड' 'भारत अखण्ड'।

युवक

हम युवक कि हमने ही हँस हँस
संघर्षों को अपनाया है,
उठ उठ बढ़ते तूफानों से
हमने ही नेह लगाया है।

हम उठे कि आशा के प्रदीप
जल उठे मातु के मन्दिर में,
हम जुटे कि विद्रोही गायन
भर गये अवनि में अम्बर में।

हम अड़े गोलियों के सन्मुख
'भारत माँ की जय' बोल बोल,
हम बढ़े कि पापी सत्ता की
गहरी बुनियादें उठीं डोल।

गति देख हमारी अरे स्वयं
पन्ने उलटे इतिहासों के,
बलिदानों की मधु वेला में
बिछ गये पाँवड़े ल्हाशों के।

तब शरमाता, कुछ: सकुचाता
भारत भू पर उतरा स्वराज्य,
भारत की सीमा छोड़ चले
उन खूनी गोरों के जहाज।

उस समय कि जब 'भारत की जय'
कहने पर कोड़े पड़ते थे,
'गाँधी की जय' कहने वाले
जाकर जेलों में सड़ते थे।

पद लोलुप जिन हत्यारों ने
बच्चों पर गोली चार्ज किये,
जिसके बदले में सत्ता ने
भर भर झोली वरदान दिये।

वे अब भी शासक बने हुए
हमको आँखें दिखलाते हैं,
हा शोक! हमारे ही नेता
उनको चालें सिखलाते हैं।

पहले जो नारों को सुनकर
घर के भीतर घुस जाते थे,
या क्रान्ति-कारियों की जाकर
थानों में रपट लिखाते थे।

वे अवसरवादी सेठ लोग
कुछ कुछ वकील कुछ जमीदार,
बढ़ बढ़ यों बातें करते हैं
जैसे अब भावी भारत का
इनके कन्धों पर पड़ा भार।

अब तो एडी से चोटी तक
खद्दर के कपड़े पहने हैं,
पत्रों में दिन चर्य्या छपती
अब तो इनके क्या कहने हैं।

नेता को ख़ास सभाओं में
स्पेशल आमन्त्रण मिलते,
खादी के पर्दे के भीतर
हैं भारी भारी गुल खिलते।

ये रँगे सियार समझते हैं
यह सारी दुनियाँ अन्धी है,
यदि एक इलेक्शन जीत गये
तो फिर चन्दी ही चन्दी है।

हम देख रहे अपनी आँखों
इनकी इन सारी चालों को,
निर्धन ग्रामीण किसानों पर
इनके फैलाये जालों को

हम विद्रोही बन प्रलयंकर
ये मरु के दुर्ग ढहा देंगे,
जिस दिन करवट पलटी समझो
भारत में नवयुग ला देंगे।

शोषण उत्पीड़न के घन
अम्बर पट छूना चाह रहे,
कितने अन्तर में आग लिये
हैं देख क्रान्ति की राह रहे।

बे रोजगार कितने जवान
शहरों की सड़कों पर फिरते,
हैं विविध व्याधियों के बादल
जिनके मरु मानस में घिरते।

जिनको शिक्षित करने के हित
पानी सा द्रव्य बहाया है,
उनपर अवलम्बित वृद्धों ने
सुख का दिन देख न पाया है।

उनके उस टूटे अन्तर में
जलती अरमानों की होली,
श्रवणों से सुनी नहीं जाती
हा, उनकी वह कातर बोली।

हैं पक्षपात के नग्न नृत्य
पग पग दिखलाई देते,
जिनका अवलम्ब नहीं है कुछ
'हे दीनबन्धु' कह दुख सहते।

जनता के सच्चे भक्तों को
आजन्म जेल खाना मिलता,
इस प्रजातन्त्र के चोले में
नादिर शाही डंडा चलता ।

वे देखो, वलिया के जवान
जो खेले अपनी जानों पर,
काले पानी का पुरुस्कार
है दिया गया वलिदानों पर ।

अपराध यही—वे कृषकों के
कृश तन में जीवन भरते थे,
उन हड्डी के ढाँचो को ही
वे सुभट संगठित करते ।

रे एक नहीं कितनी ही तो
नित नई समस्याएँ आतीं,
कवि की इन सूनी पलकों में
वनकर करुणा के घन छातीं ।

युग निर्माता का असह बोझ
कवि के इन दुर्बल कन्धों पर,
लख लोह लेखनी उबल पड़ी
अधिकारों के प्रतिबन्धों पर।

चिर परिचित नारा 'इन्किलाब'
का फिर से दुहराना होगा,
सुन जिसे दिशाएँ उठें काँप
वह प्रलय गीत गाना होगा।

हैं राख हुए जाते सारे
जितने नवयुग के सपने हैं,
आज़ाद कहाँ, बरबाद हुए
हो गये पराये, अपने हैं।

इस धर्म चरित्री से सारा
यह प्रजातन्त्र का ढोंग हटे,
जन जन में हो वैषम्य नहीं
यह ऊँच-नीच का भेद मिटे।

हम जियें और को जीवन दे,
हम पियें और को पय घट दे,
हम एक बार ही मुसकायें
उन अधरों को मुसकाहट दे।

जो अब तक पूँजी-पतियों की
उन अनगिन निर्दयताओं का,
बनकर शिकार थे बन्द हुए
इस विधि की निर्ममताओं का।

तो उठो युवक हम एक बार
दें पलट दैव का भी विधान,
प्रलयंकारी हुँकारों से
थर थर थर्रादें आसमान।

जीवन का मधुमय लक्ष्य यही
हम अग जग के संताप हरें,
आ महाकाल भी पथ रोके
उससे भी दो दो हाथ करें।

हम देखेंगे फिर अश्रु गेस
गोले-गोली क्या कर लेंगे,
हम क्रान्ति दीप के दीवाने
जब प्राण हथेली पर लेंगे।

हमसे ही नष्ट प्राय होगी
नैराश्य घटा सी घिरी रात,
हम ही से होगा उद्घाटन
तब होगा नवयुग का प्रभात।

शिक्षक

उतरा मुँह, सूखा सा शरीर
जैसे तुषार पड़ जाने पर
मुरझाता अलसी का पौधा ।
उन धँसी हुई दो आँखों पर
जो देख रहीं हैं वर्षों से—
कंगाली का नंगा नर्त्तन,
मानवता की होतीं हत्या,
जग-जीवन के उत्थान पतन,
है चढ़ा हुआ टूटा चश्मा ।
जिसका वह दायाँ लैंस
पैर के नीचे आकर गया टूट
पावों में जिसके धूल भरे
हैं बाटा के वे फटे बूँट
जो मुँह बाये करते प्रतिपल
निज स्वामी का उपहास मौन ।
जिसके उन नन्हें बच्चों को
हो सका कभी यह ज्ञात नहीं
कि दूध और पानी में

कितना अन्तर है ।
यह क्या-छतरी की आड़ लिए
क्यों अध्यापक जी रहे खिसक ?
समझा—उस मानू बनिये का
माथे कर्जा आता होगा,
परसों जो पैंसठ रुपय मिले
कुछ इधर-उधर को ले देकर
सन्नो की साड़ी ले आये ।
जो तीन महीने से प्रतिदिन
वह फटी हुई साड़ी ओढे
मन मारे विद्यालय जाती
सखियों की सजधज देख देख
अपने मन में शरमाती थी ।
उस दिन तनखा के रुपय देख
रोकर बोली बाबू जी से
'इक मोटी सी साड़ी ला दो ।'
रो उठा हृदय बाबू जी का
जाकर बाजार से सवा सात की
सूती साड़ी ले आये,
बस इसीलिये उस बनिये का
कर सके नहीं चुकता हिसाब ।

लो देख लिया मानूजी ने
चिल्लाकर बोले— "पंडितजी
यों चोरों सा छिप कर जाते
तुमको कुछ शर्म नहीं आती ?
मैं रोज देखकर रह जाता—
लाओ, हिसाब चुकता करदो।"
पंडित जी बोले—"सेठ साब
कुछ बचा नहीं इस तनखा पर
अबके जब तनखा आवेगी
मैं घर आकर दे जाऊँगा।"
गरजे मानूजी— "इसी लिए
तो तुमसे नंगे लोगों को
मैं कभी नहीं देता उधार।"
निज दाँत दिखा, फिर हाथ जोड़
चल दिये सोचते पंडित जी
भारी डग धीमे पड़ते थे
था दूर बहुत विद्या मन्दिर।
जब जाकर विद्यालय पहुँचे
बज गया वहाँ पहला घंटा,
सोचा पीछा घर लौट चलूँ
'पर दो रुपये कट जावेंगे,

छुट्टी भी तो है शेष नहीं'
कुछ सहमे से कुछ डरे हुए
जा पहुँचे कमरे के भीतर
साक्षात रौद्र की मूर्ति बने
जिसमें बैठे थे मठाधीश।
लखते ही अध्यापक जी को
वे ज्वालामुखि से उठे फूट
बोले—"अपने बावा का ही
तुमने स्कूल समझ रक्खा
जब मन माँगा आ जाते हो
जब चित चाहा रह जाते हो
मत किसी भरोसे में भूलो
तुमको 'सिरोंज'* दिखवा दूंगा
जो ज्यादा गड़बड़ की तुमने
तो पत्ता भी कटवा दूंगा।"
गिड़गिड़ा कहा पंडित जी ने
"इस बार क्षमा करदो हुजूर
अब आगे देर नहीं होगी।"
पर वे तो अफ़सर आला हैं
कुछ वहाँ क्षमा का काम नहीं

* कोटा डिवीजन का एक नगर

'ग' लगा दिया झट खाते में
बोले 'जा कक्षा में बैठो।'
पंडित जा कक्षा में बैठे
आगे भू मण्डल गया घूम
फिर सोचा—जाकर साहब से
क्यों नहीं शिकायत मैं कर दूं
हैं कई बार ये मठाधीश
खुद बहुत देर से आते हैं
घर पहुँच छात्रों के प्रतिदिन
ये दूध—मलाई खाते हैं।
पर एक बार पहले भी तो
जब भद्दी गाली देने पर
मैं जा साहब से बोला था
तो साहब ने भी डाट मुझे
था कहा—"नौकरी करना है
तो गाली भी सुनना होगा
फिर कभी शिकायत की तुमने
तो कह देता हूँ अध्यापक
जीवन भर पछताना होगा।"
बस उठे वहीं पर बैठ गये
वे स्वाभिमान् के सभी भाव।

कष्टों—अपमानों में पलते
फिर तुम्हीं कहो ये अध्यापक
क्या खाकर भावी भारत की
इन उठती नव आशाओं को
सिखला पायेंगे स्वाभिमान
सिखला पायेंगे देश—प्रेम
ला पायेंगे ये नव विहान।
जिनके मरु मानस में न कभी
भूलें से मुसकाया वसन्त
जिनको न कभी सनमान मिला
पलभर न जिन्हें विश्राम मिला
बोझिल जीवन की गाड़ी को
हैं खींच थके अवयव जिनके।
नित नई योजनाएँ बनतीं
भारत भू स्वर्ग बनाने को
पर ध्यान रहे—जब तक
शिक्षक के संकट नष्ट नहीं होंगे
शिक्षा की वृद्धि नहीं होगी।
तब तक उन्नति की आशाएँ
सुख—वैभव के ये सभी स्वप्न
सेंमल के फूल सरीखे हैं।

आगामी प्रकाशन

राजस्थान की नवोदित काव्य प्रतिभा का परिचय देने वाली अपने ढंग की पहली और अनूठी पुस्तक "हिलोर"। इस पुस्तक में, जो राजस्थान की वर्तमान पीढ़ी के प्रायः समस्त कवियों के काव्य का परिचय ग्रंथ होगा, प्रान्त भर के चुने हुए सभी कवियों की कवितायें प्रस्तुत की जायँगी।

कवि पवाँर के गीले गीतों का संग्रह "संदेश"। कवि की लेखिनी से जो 'क्रांति किरण' निकली, आपने देखी। शीघ्र ही उनके सरस गीतों के भावलोक में आपके मन को बरबस रमा लेने वाली पुस्तक प्रकाशित हो रही है।

नई पीढ़ी के प्रगतिशील एवं प्रतिनिधि कवि जगदीश चतुर्वेदी का कविता संग्रह "संसार"। पुस्तक में कवि की उन कविताओं का संकलन किया जा रहा है, जो दैनिक जीवन के उपयोग में आने वाली विभिन्न वस्तुओं को लेकर लिखी गई हैं।

अग्रिम प्रति सुरक्षित करवाने के लिये लिखें या मिलें—

कवि पवाँर

या

मालवीय ब्रदर्स

रामपुरा, कोटा (राजस्थान)